गुजरात के इतिहास-निरूपण में आधुनिक जैनसाधुओं का योगदान

श्री रसेस जमींदार

प्राचीन काल से भारत में धर्म के क्षेत्र में दो परम्पराएं चली आ रही हैं : ब्राह्मण और श्रमण। श्रमण परम्परा में जैन धर्म का समावेश होता है। जैन धर्म में त्यागी भिक्षुसंघ और गृहस्थी श्रावकसंघ नाम से जाने जाते हैं। श्रावकसंघ की तुलना में संघ को कई विशेष नियमों का चुस्त-रूप से पालन करना होता है। इसमें पांच महाव्रत मुख्य हैं।[1] इन पांच महाव्रतों में एक अपरिग्रह है। जैन आगम ग्रन्थ स्पष्ट सूचित करते हैं कि भिक्षुओं को पुस्तकों का भी परिग्रह नहीं करना चाहिए। परन्तु धर्म और साहित्य के विकास के साथ भिक्षुओं को विस्तृत साहित्य याद रखना कठिन पड़ा। अतः कालान्तर में ज्ञान के अनिवार्य साधन के रूप में पुस्तकों को स्वीकार करना पड़ा। अब पुस्तकें भिक्षुओं के लिए अनिवार्य मानी जाने लगीं। ज्ञान के साक्षात्स्वरूप में पुस्तकों की पूजा आरम्भ हुई और कार्तिक शुक्ला पंचमी 'ज्ञान मंजरी'[2] के नाम से मनाई जाने लगी। परिणामस्वरूप जैन-मन्दिरों में पुस्तकों का सम्मान होने लगा और समृद्ध पुस्तकालय अस्तित्व में आने लगे। जैनों की शब्दावली में पुस्तकालय 'ज्ञानभण्डार' के नाम से ख्यात हैं।

तन-मन की शुद्धि हेतु मानवजीवन में तीर्थों का महात्म्य प्रत्येक धर्म में स्वीकार्य है। जीवन की मुसीबतों एवं परेशानियों से विलग कर आत्म-शान्ति प्राप्त कराने वाली तीर्थयात्रा एक अमोघ औषधि है। जैन धर्म में तीर्थयात्राओं का महत्त्व अधिक दृष्टिगत होता है। इस धर्म के भिक्षुसंघ एवं श्रावकसंघ ने तीर्थों के रक्षण एवं नवनिर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। तीर्थों के नवनिर्माण में यह एक विशेषता है कि मन्दिरों के जीर्णोद्धार और मूर्त्तियों की प्रतिष्ठा जैनियों ने धार्मिक भावना से ही की है, इसमें पुरावशेषीय दृष्टि नहीं है। नई मूर्त्तियों की प्रतिष्ठा से पहले पुरानी मूर्त्तियां अप्रतिष्ठित न हों अतः उनका संग्रह देखने में नहीं आता। फिर भी तीर्थों के नवनिर्माण द्वारा धर्म के सातत्य को संग्रहित किये रहना सचमुच प्रशंसनीय कार्य है।

तीर्थों की नवरचना के साथ-साथ जैन समाज का महत्त्वपूर्ण योगदान पुस्तकों का संग्रह और उनका रक्षण करना है। मात्र-पुस्तकों को एकत्रित करना काफी नहीं उनका रक्षण करना भी उतना ही आवश्यक है। उल्लेखनीय है कि इन पुस्तकालयों में मात्र जैन धर्म की ही पुस्तकें नहीं हैं। दुर्लभ एवं अप्राप्त जैनेतर ग्रन्थ, हस्तलिखित प्रतियों आदि से आज भी समृद्ध हैं और विद्वानों के उपयोग की दृष्टि से ये सर्वमान्य भी बने हैं। यह इनकी अभ्यास निष्ठा एवं उदारता का द्योतक है। जन सामान्य के उपयोग हेतु पुस्तकालयों की स्थापना के संचालन कार्य में जैनियों ने महत्त्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय कार्य किया है। भारत में यह ही एक ऐसा धर्म है, जिसने पुस्तकों को एकत्र करके पुस्तकालयों के माध्यम से उन्हें संगठित रूप देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। जैनों की सामान्य जनसंख्या वाले प्रत्येक गांव में यदि एक दो ज्ञानभण्डार न हो असम्भव है।[3] इसी से इतिहास के विद्वानों को इन ज्ञानभण्डारों में से जैन एवं जैनेतर अप्राप्त एवं प्राचीन ग्रन्थ प्राप्त हो जाते हैं यह इसकी ऐतिहासिक महत्ता को प्रकट करता है।

पुस्तकों को एकत्रित करना, संरक्षण एवं संगठित रूप देने में ही इस समाज ने अपना कार्य पूरा नहीं माना। पुस्तक प्रकाशन प्रवृत्ति के महत्त्व को समझकर प्रकाशन का कार्य भी शुरू किया। इस प्रवृत्ति के द्वारा ही साधुओं के ज्ञान का लाभ सर्वसाधारण को मिला। आज जब कि विद्वान् लेखकों को अपने लेख को छपवाने के लिए प्रकाशक की खोज में निकलना पड़ता है, उसमें भी इतिहास, आलोचना या कविता की पुस्तकें प्रकाशक जल्दी छापते भी नहीं, जबकि वर्षों से चल रही जैन समाज की पुस्तक-प्रकाशन-प्रवृत्ति जैन समाज के लिए ही

१. अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। श्रावक संघ भी इन व्रतों का यथाशक्ति पालन करता है जिन्हें 'अणुव्रत' कहते हैं।

२. दिगम्बर मान्यता में यह पर्व श्रुतपंचमी (ज्येष्ठ सुदी पंचमी) को प्राचीन काल से आयोजित किया जाता आ रहा है।—सम्पादक

३. भो० ज० सांडेसरा 'इतिहासनी कैडी', पृ० १५-१६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं परन्तु मानव समाज के लिए आशीर्वाद स्वरूप है—कहना जरा भी गलत नहीं। इनकी पुस्तक प्रकाशन एवं पुस्तकालयों के कार्य में भिक्षुसंघ की प्रेरणा एवं ज्ञान साथ ही श्रावक संघ की आर्थिक सहायता एवं उदारता का सुन्दर समन्वय दृष्टिगोचर होता है।

जैन साधु किसी भी स्थान में लम्बे समय तक नहीं रह सकते मात्र वर्षा ऋतु में ही वे नियत स्थानों में रुकते हैं। इस प्रकार वर्ष में अधिकांश समय जैन साधु भ्रमण में व्यतीत करते हैं। उनके इस पैदल प्रवास में वे एक गांव से दूसरे गांव, और एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जाते हैं। इससे वे विभिन्न स्थानों एवं नगरों से परिचित होते हैं, विविध संस्कृतियों का मेल होता है। भ्रमणावसर पर राह में आने वाले शिल्प-स्थापत्य, प्राचीन अवशेष, ऐतिहासिक स्थलों को देखने का अवसर मिलता है। समाज के विभिन्न रहन-सहन, एवं रीतिरिवाजों से परिचित होते हैं साथ ही मार्ग के गांवों से ज्ञानभण्डारों का अलभ्य ज्ञान प्राप्त होता है जिससे नयी खोज में अनुकूलता रहती है। वर्षाऋतु में स्थायी निवास से लेखन एवं सर्जनात्मक कार्य अच्छी तरह हो सकता है। जैन साधुओं को भ्रमण की अनुकूलता और वर्षाऋतु के स्थायी निवास का सुअवसर, अधिकांश साधुओं की जिज्ञासावृत्ति और कर्मशीलता एवं इतिहास के प्रति उनकी रुचि के लिए पोषक सिद्ध हुई है। परिणाम-स्वरूप तीर्थों का सामान्य परिचय, मन्दिर एवं मूर्त्तियों का सूक्ष्म वर्णन, मन्दिर रचना एवं प्रतिमा-स्थापना के लेखों का वाचन एवं सम्पादन जैसे इतिहास एवं संस्कृति के अनेक ग्रन्थों के लेखन में जैन साधुओं ने विशिष्ट योगदान दिया है विशेषत: तीर्थ एवं तीर्थस्थानों के वर्णन और उनके महात्म्य संबंधी वर्णन इन ग्रन्थों में अधिक हैं। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से भी इन ग्रन्थों का महत्त्व कम नहीं है। क्योंकि उनमें केवल तीर्थों एवं प्रतिमाओं का ही वर्णन नहीं साथ ही प्रतिमा लेखों या शिलालेखों का अध्ययन, स्थानों का भौगोलिक परिचय, स्थान, नामों के पूर्वकालिक-समकालीन परिचय, तत्कालीन राजनीति का वर्णन, सामाजिक जीवन का वर्णन और जैनेतर तीर्थों जैसी इतिहासोपयोगी सामग्री प्राप्त होती है। इसी प्रकार के यात्रा वर्णन के पुस्तकों को मूल्यांकन करते हुए मुनि श्री विद्याविजयजी लिखते हैं—"किसी भी राष्ट्र के इतिहास निर्माण में 'भ्रमण वृत्तान्त' अधिक प्रामाणिक माने जा सकते हैं। उन-उन समयों में चलने वाले सिक्के, शिलालेख और ग्रन्थों के अन्त में दी गई प्रशस्तियां—इन सभी वस्तुओं द्वारा किसी भी वस्तु का निर्णय करना कठिन होता है जब कि उन-उन समय के 'प्रवास वर्णन' इन कठिनाइतों को दूर करने के सुन्दर साधन के रूप में काम आता है। इन्हीं कारणों से आधुनिक लेखकों को तत्कालीन स्थिति सम्बन्धी कोई भी निर्णय लेने में स्वदेशी या परदेशी मुसाफिरों के 'भारत यात्रा वर्णन' पर अधिक ध्यान देना पड़ता है। साथ ही उन यात्रियों द्वारा लिखित सामग्री सत्य है, प्रामाणिक है, मानना पड़ता है।[1] पूर्वकालिक जैन साधुओं ने गुजरात के इतिहास लेखन में उत्कृष्ट योगदान दिया है। उनके द्वारा लिखित ग्रन्थों को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है :—

१. विविध तीर्थों का परिचय
२. निबन्ध
३. महान् पुरुषों का जीवन परिचय

वैसे ये सभी पुस्तकें धार्मिक दृष्टि से लिखी गई हैं फिर भी इनमें मुख्यत: गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास से सम्बन्धित परिचय अच्छी तरह निकाला जा सकता है। साथ ही अनेक बार ये राजकीय परिचय भी दे सकते हैं। कभी-कभी तो राजकीय घटनाओं की सत्यता के समर्थन में ये ग्रन्थ उपयोगी सिद्ध होते हैं। इन पूर्वकालिक जैन साधुओं के समग्र साहित्य के बारे में पहले विस्तृत परिचय दिया जा चुका है।[2] भोगीलाल सांडेसरा ने[3] और जिनविजय ने[4] उनके बाद के साधुओं का इतिहास निरूपण में योगदान का वर्णन किया है। अत: अब यहां आधुनिक जैन साधुओं ने गुजरात के इतिहास निरूपण में क्या योगदान दिया, वह देखें।[5]

आधुनिक जैन साधुओं की पुस्तकों को सामान्यत: तीर्थस्थानों का परिचय, अभिलेख, प्रभावकारियों के चरित्र, रास-संग्रह, इतिहास आदि विभागों में रखा जा सकता है।

१. तीर्थ स्थानों का परिचय (यात्रा-वर्णन):

आधुनिक जैन साधुओं के ग्रन्थों का बृहत्त-भाग इसी के अन्तर्गत आता है। इस प्रकार के पुस्तकों के लक्षण देखने से कहा जा सकता

---

१. 'मारीकच्छ यात्रा', प्रस्तावना, पृ० ११

२. मनसुख कीरतचन्द मेहता, 'जैन साहित्य नो गुजराती साहित्य मां फाड़ो', द्वितीय गुजराती साहित्य परिषद् का विवरण और 'जैन साहित्य', तृतीय गुजराती साहित्य परिषद् का विवरण।

३. 'जैन आगम साहित्य मां गुजरात' (१९५२) और 'महामात्य वस्तुपालनुं साहित्य मण्डल तथा संस्कृत साहित्य मां तेमनो फाड़ो' (१९५७)

४. 'प्राचीन गुजरात ना सांस्कृतिक इतिहास नी साधन सामग्री' (१९३३), पृ० १० से ३६। इसमें विक्रम की ग्यारहवीं सदी से उन्नीसवीं सदी तक की अनेक जैन कृतियों का उल्लेख है।

५. इस लेख में जैन साधुओं के प्रकाशित मात्र गुजराती पुस्तकों का समावेश किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है कि उनमें से विशेषतः सांस्कृतिक परिचय मिलता है। ये सभी पुस्तकें जैन धर्म को केन्द्रस्थ मान कर लिखी गई हैं। फिर भी उनमें से धार्मिकता के तत्त्व को निकाल देने के बाद भी इतिहासोपयोगी सामग्री पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हो जाती है। जैन तीर्थों के वर्णनों के साथ आस-पास अवस्थित जैनेतर तीर्थों का परिचय देना उदारतापूर्ण है। तीर्थों का तत्कालीन इतिहास, स्थलनामों का तत्कालीन-समकालीन परिचय साथ ही क्रमिक रूपान्तरों का परिचय, उन तीर्थों की भौगोलिक स्थिति और वहां के आवागमन भागों का वर्णनों में सूक्ष्म से सूक्ष्मतम विषयों का परिचय, विवादास्पद विषयों के समर्थन में विद्वानों के मन्तव्य या तथ्य, शिल्प स्थापत्य लेख या मन्दिरों के चित्र, मन्दिरों की स्थापना या जीर्णोद्धार से जुड़े राजा, मन्त्रियों एवं राज्य का परिचय, मन्दिरों की रचना, जोर्णोद्धार या प्रतिमाप्रतिष्ठा के लेखों का अनुवाद सहित परिचय---ये सभी लक्षण इतिहास के प्रति उनकी अभिरुचि के द्योतक हैं।

प्राचीन तीर्थमाला-संग्रह भाग-१[१]	विजयधर्म सूरि	१९२२
भारी कच्छ यात्रा[२]	विद्या विजय जी	१९४२
शंखेश्वर महातीर्थ भाग-१-२[३]	जयन्त विजय जी	१९४२
आबू भाग-३ (अचलगढ़)[४]	जयन्त विजय जी[५]	१९४६
आबू भाग-४ (अर्बुदाचलप्रदक्षिणा)[६]	,,	१९४८
उपरियात्रा तीर्थ	,,	१९४८
आबू भाग-१ (तीर्थराज आबु, तृतीय संस्करण)	जयन्त विजय जी	१९५०
नाकोडा तीर्थ[७]	विशाल विजय जी[८]	१९५३
भोरोल तीर्थ[९]	,,	१९५४
वे जैन तीर्थों (चारूप, मेत्राणा)[१०]	,,	१९५५
चार जैन तीर्थों (मातर, सोजित्रा, धोलका, खेड़ा)	,,	१९५६
कावी-गंधार-झगड़िया[११] (तीन तीर्थ)		१९५७
भारत नां प्रसिद्ध जैन तीर्थों[१२]	कनक विजय जी	१९५८

१. मुनि जी ने इस पुस्तक में पच्चीस तीर्थमालायें दी हैं, आरंभ में प्रदेश का भौगोलिक विभागों के आधार पर संक्षिप्त परिचय दिया है, ये तीर्थ मालायें अनेक प्रकार का सांस्कृतिक परिचय देती हैं।

२. विस्तार के साथ लिखी गई इस पुस्तक में अभिव्यक्त ऐतिहासिक सामग्री बहुत महत्त्वपूर्ण है। 'कच्छ अे तो पुरावशेषोनो छे' इसके महत्त्व को पहचान 'कच्छ ना पुरातत्त्व' विषय पर एक अलग प्रकरण दिया गया है। इसके बाद 'कच्छ' शब्द के विविध अर्थों का संक्षिप्त वर्णन, उनका भौगोलिक वर्णन, सामाजिक धार्मिक जीवन, पूर्वकालीन-अर्वाचीन राजकीय स्थिति, शिक्षण एवं औद्योगिक जीवन का ज्ञान उल्लेखनीय है।

३. प्रथम भाग में ऐतिहासिक वर्णन और परिशिष्ट में ६५ शिलालेखों को अनुवाद सहित दिया गया है, द्वितीय भाग में इस तीर्थ से सम्बन्धित जो---कल्प स्तोत्र, स्तुति श्लोक मिले हैं वे दिये गये हैं।

४. अचलगढ़ के उच्च शिखर से तलहटी तक, उसके आसपास के मैदानों में तथा नजदीक के जैन, वैष्णव, शैव आदि धर्मों के तीर्थ तथा मन्दिर और प्राकृतिक एवं कृत्रिम पूर्वकालिक दर्शनीय स्थलों का वर्णन इस ग्रन्थ में दिया गया है।

५. मुनि जी ने आबू भाग १ से ५ में आबू और आसपास के प्रदेशों में अवस्थित जैन और जैनेतर तीर्थों का ऐतिहासिक परिचय दिया है। भाग २ और ५ में अभिलेखों की विस्तृत छानबीन की है। उनकी इस पुस्तक में चित्रों का भी काफी महत्त्व है। प्रथम भाग में ही ५१ चित्र दिये गये हैं। इन ग्रन्थों में मुनि जी की इतिहास के प्रति गहन सूझ-बूझ परिलक्षित होती है। आबू का ऐसा विस्तृत वर्णन शायद ही अन्यत्र देखने को मिले।

६. इस ग्रन्थ में ९७ गांवों का संक्षिप्त परिचय है। इनमें से ७१ गांवों से अभिलेख मिले हैं। प्रत्येक गांव का सूक्ष्म वर्णन किया गया है। जैन पारिभाषिक शब्द एवं अन्य शब्दों को भी समझाया गया है। अर्बुदाचल की वृहद् प्रदक्षिणा एवं लघु प्रदक्षिणा के खाके दिये गये हैं जो अनुक्रमणिका में दिये गये हैं।

७. मारवाड़ में प्राचीन जैन तीर्थ हैं, आरम्भ में मुंजपर, नोंधणवदर और पंचासर का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इस तीर्थ का वर्त्तमान नाम महेवानगर है।

८. तीर्थों का वर्णन प्रस्तुत करने में इस मुनि का विशिष्ट योगदान है। परिभ्रमण में जिन-जिन तीर्थों के अध्ययन का अवसर मिला उनका संक्षिप्त परन्तु सर्व-ग्राही परिचय के साथ इन्होंने बारह पुस्तिकायें लिखीं उनका यह कार्य अभी भी जारी है चित्रों का प्रमाण कम है यह ही एक कमजोरी है।

९. यह उत्तर गुजरात के बनासकांठा जिले में हैं। इसके अलावा भीलड़िया, थराद, ढिमावाव और हुआ तीर्थों का परिचय भी दिया गया है।

१०. चारूप पाटण के पास और मेत्राणा सिद्धपुर के पास हैं।

११. ये तीनों तीर्थ दक्षिण गुजरात में हैं, कावी जम्बुसर तहसील में, गन्धार भरुच से ४१ कि० मी० उत्तर-पश्चिम में और झगडिया नादोद तहसील में हैं।

१२. मुख्यतः गुजरात-सौराष्ट्र-कच्छ के ७० से अधिक जैन तीर्थों का परिचय कराया है। कई नगरों का प्राचीन ऐतिहासिक माहिती भी दिया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घोघा तीर्थ[1]	विशाल विजय जी	१९५८
भीलडिया तीर्थ[2]	,,	१९६०
मुंडस्थल महातीर्थ (मूंगथला)[3]	,,	१९६०
राधनपुर (एक ऐतिहासिक परिचय)	,,	१९६०
आरासणतीर्थ (कुंभारियाजीतीर्थ)[4]	,,	१९६१
सेरिया, भोयणी, पानसर अने बीजा तीर्थो[5]	,,	१९६३
सांडेराव (एक ऐतिहासिक परिचय)[6]	,,	१९६३

२. अभिलेख :

जैन मुनियों के तीर्थ वर्णन के ग्रन्थों में कभी-कभी अभिलेखों का उल्लेख हो ही जाता है साथ ही अभिलेखों पर स्वतंत्र ग्रन्थ भी उन्होंने दिये हैं।

प्राचीन जैन लेख संग्रह[7], भाग १-२	जिनविजयी जी[8]	१९२१
प्राचीन लेख संग्रह भाग १	विद्याविजयी जी (सम्पादक)	१९२९
आबू भाग-२ (अर्बुद प्राचीन जैन लेख सन्दोह)[9]	जयन्त विजय जी	१९३८
आबू भाग-५ (अर्बुदाचल प्रदक्षिणा जैन लेख सन्दोह)[10]	,,	१९४९
राधनपुर प्रतिमा लेख सन्दोह[11]	विशाल विजय जी	१९६०

३. प्रकीर्ण-साहित्य :

यहां प्रभावकों के चरित्रों नृत्य संग्रह एवं इतिहास विषयक पुस्तकों का उल्लेख किया गया है।

---

१. भावनगर से २१ कि० मी० दूर यह स्थल बलभीपुर राज्यकाल में महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह था।

२. उत्तर गुजरात में अवस्थित इस स्थान का प्राचीन नाम भीमपल्ली था। भीमपल्ली का राजा अर्णोराज वाघेला राजा कुमारपाल का समकालीन था। सदर, पृ० २१

३. आबु पहाड़ के दक्षिणी भाग में यह स्थान है इस पुस्तक में आठ चित्र हैं, जिनमें एक अभिलेख का है।

४. आबू के दक्षिण-पूर्व में आरासाण के पहाड़ हैं, इसमें आरंभ में आठ चित्र हैं जो शिल्प-स्थापत्य के अध्ययन के लिए उपयोगी हैं, परिशिष्ट में १६१ प्रतिमा लेख दिये गये हैं जो तत्कालीन राजनैतिक इतिहास के लिए उपयोगी, हैं, पुस्तक काफी अच्छी है।

५. अहमदाबाद के नजदीक के छः स्थल (तीन के अलावा वामज, उपरियाणा और वडगाम) का संक्षिप्त परिचय है।

६. राजस्थान के जोधपुर जिले में है।

७. समय की दृष्टि से पुराना से पुराना लेख विक्रमी संवत् ९९६ का हस्त कुण्डी में नये में नया वि० स० १९०३ का अहमदाबाद का है। इस प्रकार विक्रम की दसवीं सदी से बीसवीं शताब्दी तक के (एक हजार वर्ष का) लगभग ५५७ लेखों का संग्रह इन दो भागों में है।

८. मुनि जिनविजय जी गुजरात के महान् पुरातत्त्वविद थे, गुजरात के आलेखन में उनका कार्य चिरस्मरणीय रहेगा। उनके सर्जन-सम्पादन कार्य का क्षेत्र काफी विस्तृत है। साधुजीवनकाल के उनके सर्जनात्मक ग्रन्थ उसके बाद के साधुचरित जीवन के प्रमुख सम्पादित एवं संशोधित ग्रन्थों ने गुजरात के इतिहास निर्माण की चिनाई में विशिष्ट योगदान दिया है।
'शत्रुंजय तीर्थोद्धारप्रबन्ध' (१९१७), 'कुमारपाल प्रतिबोध' (१९२०), 'प्रभावक चरित' (१९३१), 'प्रबन्ध चिन्तामणि' (१९३३), 'विविधतीर्थकल्प', (१९३४) 'प्रबन्धकोश' (१९३५) 'पुरातनप्रबन्ध संग्रह (१९३६) आदि सम्पादन उनकी आजीवन विद्योपासना और अध्ययन शीलता का परिपाक है।

९. इस पुस्तक में ६६४ लेखों का समावेश किया गया है। मूल लेखों के नीचे टिप्पणी में प्राप्ति स्थान का उल्लेख है। तदुपरान्त अनुवाद दिया गया है, पुस्तक के आरम्भ में लेखों की स्थान सहित अनुक्रमणिका है और परिशिष्ट में अध्ययनकर्ताओं को सुविधा हो सके, गच्छ, गोत्र, शाखा, गांव, देश, पर्वत, नदी, राजा, मंत्री, गृहस्थ, जाति आदि को अकारादि क्रम से दिया गया है।

१०. उपर्युक्त लेखक की इस पुस्तक में भी उपर्युक्त पुस्तक की तरह मूल लेखों की टिप्पणी और फिर अनुवाद दिया गया है। कुल ६४५ लेख वि० सं० १०१७ से १९७७ तक के हैं। इन दोनों पुस्तकों में लेखक की गहनसूझ, संशोधन वृत्ति, और धैर्य प्रकट होता है।

११. मुनि जी ने आरम्भ में राघवपुर का परिचय दिया है और फिर ४८६ लेख अनुवाद सहित दिये गये हैं। पादटिप्पणी में प्रत्येक लेख के प्राप्ति स्थान का उल्लेख किया गया है परिशिष्ट में राधनपुर से सम्बन्धित रचनायें उद्धृत की गई हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूरीश्वर अने सम्राट[1]	विद्या विजय जी	१९१९
ऐतिहासिक रास संग्रह भाग १-२ (द्वितीय संस्करण)	विजय धर्म सूरि[2] (संशोधक)	१९१९
ऐतिहासिक संग्रह भाग ३	विजय धर्म सूरि	१९२१
ऐतिहासिक रास संग्रह भाग ४	विजय धर्म सूरि और विद्याविजय जी	१९२२
प्राचीन गुजरात ना सांस्कृतिक इतिहासनी साधन-सामग्री[3]	जिन विजय जी	१९३३
भारतीय जैन श्रमण-संस्कृति अने लेखन कला[4]	पुण्यविजय जी[5]	१९३६
महाक्षत्रप राजा रुद्रदामा[6]	विजयेन्द्र सूरि	१९३७
जैन परम्परा नो इतिहास भाग १-२[7]	दर्शन विजय जी, ज्ञान विजय जी, और न्याय विजय जी	१९६०

उपर्युक्त पैंतीस ग्रन्थों के द्वारा आधुनिक जैन साधुओं ने गुजरात के इतिहास निरूपण में यथाशक्ति योगदान दिया है। इनके अतिरिक्त भी अनेक जैन साधुओं ने अपना-अपना योगदान संस्कृत-प्राकृत पुस्तकों के अन्वेषण-संशोधन-सम्पादन तथा विविध लेख एवं निबंधों के द्वारा दिया है। इस लेख में केवल गुजराती में प्रकाशित पुस्तकों की समालोचना की मर्यादा स्वीकृत करने से अनेक आधुनिक जैन साधुओं का उल्लेख नहीं किया जा सका।

पुस्तकालय संरक्षण और जैन परम्परा

पुस्तकालय का भारतीय नाम 'भारती भांडागार' था जो जैन ग्रन्थों में मिलता है। कभी-कभी इसके लिए 'सरस्वती भांडागार' शब्द भी मिलता है। ऐसे भांडागार मन्दिरों, विद्यामठों, मठों, उपाश्रयों, विहारों, संघारामों, राजदरबारों और धनी-मानी व्यक्तियों के घरों में हुआ करते थे। नैषधीय चरित की जिस प्रति के आधार पर विद्याधर ने अपनी प्रथम टीका लिखी थी वह चालुक्य वीसलदेव के भारती भांडागार की थी।

—जार्ज ब्यूलर कृत भारतीय पुरालिपि शास्त्र (हिन्दी अनुवाद) पृ० २०३ से उद्धृत

१. वैसे तो पूरी पुस्तक हीर विजय सूरीश्वर और अकबर के जीवन एवं कार्यों पर प्रकाश डालता है साथ ही तत्कालीन राजकीय एवं सांस्कृतिक परिचय भी देता है।

२. मुनि जी ने चारों भागों के आरम्भ में संगृहित रासों की कथा दी है। जिनसे अपरिचित शब्दों के मूल रासों को समझने में सरलता रहे। कथासार की पाद टिप्पणी में दी गई ऐतिहासिक टिप्पणी—उपयोगी जानकारी प्रदान करती है। अन्त में दी गई, कठिन शब्दार्थ संग्रह आगामी वाचकों के लिए सहायक होगी।

३. विक्रम की दशवीं सदी से उन्नीसवीं सदी तक के शकवर्ती ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है : साथ ही लेखन पद्धति, ग्रन्थ प्रशस्तियां, सिक्के, शिलालेख, स्थापत्य और गुजरात के बाहर के राज्यों के इतिहास में गुजरात से सम्बन्धित विषय, विदेशी साहित्य, प्रसंगों की तिथि वर्ष के साथ आदि सामग्री संशोधन में उपयोगी मार्गदर्शन देती है।

४. मुख्यतः गुजरात की श्रमण संस्कृति का विस्तृत आलेखन किया गया है यह पुस्तक वास्तव में पठनीय है।

५. मुनि पुण्यविजय जी गुजरात के सम्मानीय प्राचीन विद्या के पण्डित थे। प्राकृत के गहन अध्ययनकर्ता एवं अनुसन्धानकर्ता मुनि जी लिपि के क्षेत्र में नागरी लिपि के असाधारण ज्ञाता थे। पुस्तकालयों के संशोधन एवं उन्हें व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने में इनका योगदान वास्तव में विशिष्ट है। हस्तलिखित ग्रन्थों की वर्णनात्मक सूची तैयार करने में उनकी धुन और धैर्य और अध्ययन शीलता व्यक्त होती है। संस्कृत-प्राकृत के उनके अनेक सम्पादन गुरुवर मुनि श्री चतुर विजय जी के साथ हुए हैं—'धर्माभ्युदय' (१९३९) और 'वसुदेव हिंडी' (१९३०-३१) आदि।

६. पूर्णतः ऐतिहासिक इस छोटी पुस्तक में प्राचीन काल में लम्बे समय तक शासन कर चुके क्षत्रप राजाओं में प्रमुख राजा रुद्रदामा के राजकीय व्यक्तित्व का जूनागढ़ का प्रसिद्ध शिलालेख आदि विषयों का घटनाओं के साथ वर्णन किया गया है।

७. इन दोनों भागों में १२०० वर्ष के जैन आचार्यों, जैन मुनियों, साध्वियों, राजाओं, सेठ-सेठानियों, विद्वानों, दानियों, विविध वंशों, साहित्य निर्माण, लेखनकला, तीर्थों, विविध घटनाओं आदि का प्रमाण सहित परिचय दिया गया है। जिससे तत्कालीन सांस्कृतिक प्रवाहों का सही ज्ञान मिलता है। अभी अन्य पांच भाग प्रकाशित होने वाले हैं। ये ग्रन्थ जब प्रकाशित होंगे, तब गुजराती भाषा में विशिष्ट नमूना प्रस्तुत करता यह भगीरथ कार्य सीमाचिह्न के समान बन जायेगा। ये भाग जल्दी से जल्दी प्रकाशित हों ऐसी इच्छा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org